एक खंडित प्रेमकथा

देवेंद्र

एक खंडित प्रेमकथा

शहर को लेकर निरंजन के मन में कई तरह के भय थे। कुछ आशंकाएँ थीं। कुछ संकोच था। एक अस्पष्ट और अमूर्त सी धारणा थी उनके मन में। कलकत्ता और बंबई कमाने गए गाँव के लोगों से उन्होंने शहर के बारे में सुना था। उनकी स्मृतियों में वह बहुत कुछ फिल्मों से मिलता जुलता था। आसमान तक पहुँचने की सारी सीढ़ियाँ शहरों से शुरू होती थीं। इसलिए शहर जाने का मुश्किल फैसला उन्होंने लिया। अगर

उनका बाप उनके दहेज का सारा पैसा और सामान रख कर उन्हें घर से नहीं निकाल देता तो भी निरंजन वह मुश्किल फैसला नहीं लेते। तीन साल के लिए गृहस्थ जीवन का त्याग करना निश्चित कर उन्होंने पत्नी को मायके भेजा। अपनी मितव्ययिता, मेहनत और लगन पर पूरा इत्मीनान था। उन्होंने पत्नी को सांत्वना दी; "तीन साल में इतना कमा लूँगा कि यहाँ आ कर कस्बे में अपनी कोई न कोई दुकान खुल जाएगी।" आखिरी रात पत्नी ने उन्हें खूब जोर जोर से चूमा और भाई के साथ मायके चली गई।

शहर पहुँचने के बाद निरंजन के सामने तत्काल समस्या यह थी कि गुजारा कैसे हो? वह गलियों और दुकानों का चक्कर दर चक्कर लगाते। "कोई भी काम चाहिए" दुकानदारों से कहते।

अधिकांशतः लोग व्यस्त रहते थे और उन्हें हाथों के इशारे से ही टरका देते। कुछ गौर से देखते एक तो अपरिचित, दूसरे जवान छोकरा। सब ऐसे ही टूअर की तरह दीन हीन बन कर आते हैं सब सोचते अभी तो झाड़ू लगाने का काम माँग रहा है और एक दिन पूरी दुकान में झाड़ू लगा कर चल देगा - "रहने दो भइया यहाँ कोई काम नहीं है।" दुकानदार उसकी ओर संशय से देख कर कहते।

उस दिन जब निरंजन मनोहर लाल जायसवाल की दुकान पर पहुँचे तो दोपहर का समय था। बरसात के बाद की चिलचिलाती दोपहर। दुकान में कोई ग्राहक नहीं था। मनोहर लाल जी चुपचाप बैठे सूनी और उदास आँखों से सड़क की ओर देख रहे थे। यहाँ लोगों का आना जाना बदस्तूर जारी था। लेकिन दुकान के एकांत में बैठे मनोहर लाल जी उस समय जीवन और जगत से संबंधित कुछ मौलिक और दार्शनिक विचारों में खोए हुए थे। दरअसल, पिछले दिनों उनके भीतर ऊब और एकांत का जो थक्का जम गया था, वह उससे निजात पाना चाह रहे थे।

ठीक उसी समय निरंजन काम की तलाश में उनकी दुकान पर पहुँचे, "मैं गाँव से आया हूँ सेठ जी। मुझे काम चाहिए। बी.ए. तक पढ़ा हूँ। पढ़ने लिखने से लेकर झाड़ू पोछा तक कोई भी काम कर सकता हूँ।" उन्होंने सुबह से कुछ खाया पिया नहीं था। हलक सूख रहा था, आवाज में पत्थर को कँपा देने वाली निरीहता और करुणा थी।

ऊब उमस और भूख प्यास से थकी दोपहर की उस एकांत में मनोहर लाल जी ने ध्यान से निरंजन के चेहरे को देखा। ऐसे ही, बहुत पहले एक बार वह कलकत्ता गए थे। चौरंगी लेन पर अचानक उन्होंने पाया कि रुपयों से भरा उनका थैला किसी ने मार दिया है। अचानक वह थरथर काँपने लगे थे। ट्राम और भीड़ के शोर से भरा कलकत्ता शहर तुरंत रेगिस्तान के अंतहीन तपते मैदान में बदल गया। इस शहर में कोई भी परिचित नहीं

था। भूख और प्यास की गर्द से भरा उनका चेहरा मुरझा गया था। कोई दूसरा विकल्प न था। हे भगवान कैसे पहुँचेंगे घर? एक दुकान में गए। शर्म, संकोच और झिझक से बोझिल, "सेठ जी।" मनोहर लाल ने दीन हीन कातर वाणी में निवेदन किया, मेरा कालीन का काम है। ...शहर के घंटाघर के सामने मेरा शो रूम है। आज पहली बार इस शहर में आया था। आज ही किसी ने...

सेठ ने उन्हें आत्मीयतापूर्वक खिलाया पिलाया। रास्ते के लिए पूड़ियाँ बँधवा दी। किराए के टिकट से पाँच सौ रुपए अधिक दिया। अगर मनुष्य नहीं होता तो भगवान कब का बिलबिला कर मर चुका होता। ऐसे ही लोगों ने ईश्वर को शरण दे रखा है। मनोहर लाल जी ने अपनी जिंदगी में उतना भला आदमी नहीं देखा था।

"तुम कहाँ के रहने वाले हो भाई?" - मनोहर लाल जी ने निरंजन से ऐसी ही कुछ बातें पूछीं।

इस तरह शहर में मनोहर लाल जी की दुकान पर निरंजन को पाँव टेकने की जगह मिल गई। वे आत्मा की गहराई से मनोहर लाल जी की इज्जत करते थे। शब्द की मौलिक और आदिम गरिमा के साथ उन्हें 'सेठ जी' कह कर बुलाते थे।

पंद्रह, बीस दिन के बाद काम देखकर वेतन तय होना था। वह मन लगा कर काम करते अगर सेठ जी पाँच सौ रुपया देना तय कर लें तो शहर का उनका खर्च निकल जाएगा। गाहे बगाहे पत्नी के लिए भी कुछ पैसा भेज दिया करेंगे। फिलहाल जिंदगी की इतनी ही जरूरत थी। वह शहर में कुछ काम सीखने और बाजार समझने आए हैं। बाकी ढेर सारी महात्वाकांक्षाओं को उन्होंने तीन साल के लिए स्थगित कर रखा था।

सप्ताह भर में निरंजन ने दुकान का सारा टाइम टेबुल और व्याकरण भली भाँति समझ लिया था। मनोहर लाल जी ने दुनिया देखी थी। उन्हें यह समझते देर नहीं लगी कि भिखारी की तरह दया के लिए गिड़गिड़ाते हुए यह लड़का जो उस दिन दुकान पर नौकरी के लिए आया था, उस पर उन्होंने कोई दया नहीं की है।

और एक दिन सेठ जी ने निरंजन से उनके गाँव और घर के बारे में इत्मीनान से पूछताछ की। यह जान कर कि निरंजन के पिता कस्बे के इंटर कॉलेज में संस्कृत के लेक्चरर थे, और उन्होंने अपने इस इकलौते लड़के को आगे पढ़ने में कोई मदद नहीं की। बल्कि उल्टे उसकी शादी करके दहेज का सारा रुपया और सामान खुद रख लिया और बहू बेटे को घर से निकाल दिया, सेठ जी ने टिप्पणी की, "कहाँ तो आदमी अपनी संतान के लिए तरह तरह का कुकर्म करता है, और कहाँ कुछ लोग..."

सेठ जी ने निरंजन को बताया कि अगर तुम ऐसे ही काम करते रहे तो मैं तुम्हें पंद्रह सौ रुपया माहवार दूँगा। बस कभी कभी दुकान के काम से दूसरे शहर में भी जाना पड़ेगा। 9 सितंबर... की उस शाम निरंजन ने महसूस किया कि अभाव उपेक्षा और तकलीफों में गुजरी उनकी अब तक की जिंदगी में ऐसी खुशी कभी न मिली थी। उन्होंने उठ कर सेठ जी के पाँव छुए और विनम्रतापूर्वक आग्रह किया, "मैं अपनी खुशी को सँभालने के लिए थोड़ी देर सड़क पर घूम आना चाहता हूँ।" वह थर थर काँप रहे थे। हेड पोस्ट आफिस खुला हुआ था। वहाँ जा कर उन्होंने सबसे पहले पत्नी को चिट्ठी लिखी।

दशहरे में आठ दिन की छुट्टी ले कर निरंजन गाँव गए थे। लौटने पर ही उन्हें पता चला कि सेठ जी ने शादी कर ली है। कान के पास से गुजर जाने वाली यह महज एक सूचना भर थी। इस तीसरी शादी को ले कर सेठ जी में कोई तब्दीली न थी। वह पहले की ही तरह समय से दस बजे दुकान पर आते थे और रात आठ बजे दुकान बंद करके चले जाते। पुरानी पुश्तैनी हवेली में बँटवारा होने के बावजूद सेठ जी के हिस्से में मकान के चार कमरे और बड़ा सा अहाता था। अहाते में एक ओर शिव जी का पुराना छोटा सा मंदिर और बगल में कुआँ था। कुएँ के बारे में प्रचलित था कि इसका पानी पीने से पेट का पुराने से पुराना मर्ज खत्म हो जाता है। निरंजन का काम सिर्फ दुकान पर था, लेकिन कभी कभार वह उस हवेलीनुमा मकान पर चले जाते थे। बस कभी कभार जब सेठ जी को कोई काम पड़ जाता तब समय से दुकान खोलने के लिए वे चाबी वगैरह लेने चले जाते।

दीवाली पर जब दुकान की सफाई पुताई का काम पूरा हो गया तो अकेले निरंजन ने सुबह से रात तक लग कर दुकान को पूरी तरह व्यवस्थित करके सजा दिया। दूसरे ही दिन दीवाली थी। सेठ जी ने निरंजन को सामानों की लिस्ट दी, "कल यह सारा सामान खरीद कर घर पहुँचा देना। और मालकिन ने अब तक तुमको देखा भी नहीं है। शाम को घर पर पूजा होगी। वहीं भोजन करना।" निरंजन ने सेठ जी के दिलो दिमाग पर अपनी अमिट छाप बना ली थी। ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा की प्रतिमूर्ति थे निरंजन।

दीवाली की साँझ। पूरा बाजार विजेता बारातियों के से उन्माद उल्लास और उत्सव से सराबोर संगीत और शहनाई पर थिरक रहा था। सेठ मनोहर लाल दुकान में बैठे थे। निरंजन सामानों से भरा थैला ले कर उनके घर गए। सेठ जी की शादी के बाद पहली बार उनके घर गए थे। वहीं उन्होंने देखा हल्के हरे रंग और चूने से पुती नम दीवारों के निविड़ मोहक एकांत में बैठी एक लड़की बमुश्किल जिसकी उम्र सत्ताईस अट्ठाईस

साल होगी। वह मिट्टी के भीगे हुए दीयों को मारकीन के साफ, सफेद कपड़े से पोंछ रही थी। उसने गहरे हरे रंग की बनारसी रंग की साड़ी पहन रखी थी। किनारों पर बनी सफेद सुनहली जरी। उसके चौड़े माथे पर जैसे चंद्रमा पर झालर लगा दिया गया हो। जिसे देखने को यह जीवन मर मर कर सौ बार जिए पास में स्वच्छ रुई की मुलायम बत्तियाँ और घी का डब्बा रखा था। मानसरोवर के पास अपनी बस्ती में दुखियारी यक्ष प्रिया ऐसे ही बैठी रहती होगी। लेकिन सेठानी कुछ गुनगुना रही थी। आहट पा कर उन्होंने अपनी खरगोश जैसी काली और बड़ी आँखों से निरंजन को देखा।

हजारों साल से 'सेठानी' शब्द ने अपना जो बिंब निर्मित किया था, वह अपनी समूची सांस्कृतिक अस्मिता और फूहड़ डील डौल की भौतिक धरोहर के साथ भरभरा कर गिर गया। आमतौर पर अपने काम से काम रखने वाले दूसरों के मामले में दखल न देने वाले संयमी स्वभाव वाले एकाग्रचित्त निरंजन का मन जिज्ञासु और चंचल हो गया। वह किसी भी तरह यह मानने को तैयार नहीं हो पा रहे थे कि यही सेठानी हैं। पता नहीं गाँव और बचपन के कितने संस्कार उनके भीतर थे जिनमें पला बढ़ा 'सेठानी' शब्द अपना स्थूल, भोड़ा और बदशक्ल आकार लिए रंडियों की बूढ़ी मौसी की तरह हर समय पान की पीक थूकता रहता था। सेठ जी की शादी का कार्ड उन्होंने यूँ ही दुकान पर देखा था। वह नाम याद करने लगे... निरुपमा...।

निरंजन सामानों का थैला दे कर दुकान पर चले आए। रात को सेठ जी के साथ ही आ कर उन्होंने घर पर भोजन किया। सेठ जी सोने के लिए भीतर जाने लगे तो सेठानी ने जिद की, "बिना पटाखों के कैसी दीवाली?"

शहर में चारों ओर पटाखों की आवाज आ रही थी। समूचा आकाश आतिशबाजी में नहा रहा था। सेठ को बेवजह का शोर शराबा और हुल्लड़बाजी पसंद न थी। चौबीस घंटे परमहँसी मुद्रा। लेकिन किसी पर भारी पड़ना उसकी आदत के खिलाफ था, "जो मर्जी हो करो। हमें सुबह उठ कर काम करना है।"

"क्या तुम्हें पटाखे छोड़ना आता है?" सेठानी ने निरंजन से पूछा। आवाज में चंचल मिठास थी। अपनी बड़ी बड़ी गोल आँखों से वह निरंजन को देख रही थीं।

शहर प्रवास का लंबा अकेलापन और ऊब से भरे निरंजन के मन में उस समय सिर्फ सान्निध्य लोभ था। सेठ जी कहीं बुरा न मान जाएँ, वह चुपचाप खड़े हो गए। सेठानी दौड़कर भीतर गईं और ढेर सारे पटाखे उठा लाईं। उस समय उन्होंने हल्के गुलाबी रंग की मैक्सी पहन रखी थी, जिस पर अंतरंग वस्त्रों का गाढ़ापन स्पष्टतः दिख रहा था। परियों के पंख की तरह मैक्सी। निरंजन ने सोचा, गाँव में तो संभव नहीं है लेकिन जब

कभी पत्नी को शहर लाएँगे तो ऐसी ही इसी रंग की मैक्सी उनको भी पहनाएँगे। पहली फुलझड़ी हाथों में ले कर सेठानी बच्चों की मानिंद उछलने और चहकने लगीं। उन्हीं की उम्र का एक जवान लड़का मात्र दस कदम दूर खड़ा हो कर उन्हें निहार रहा है; इस बात से पूरी तरह बेखबर वह सात आठ साल की बच्ची लग रही थी। नटखट और स्निग्ध। दोनों की झिलमिल कतारों के बीच अहाते में एकांत था। "कहीं सेठ जी नाराज न हों" निरंजन ने धीरे से पूछा।

"तुम्हारे सेठ जी बिस्तर पर जाने के दस मिनट बाद ही फोंऽ फोंऽ करने लगते हैं।" अपने से पहले ही बिस्तर पर सो चुके पुरुष को देख कर स्त्री के भीतर पैदा होने वाली ईर्ष्या और क्षोभ से भरी उनकी आवाज में एक स्वाभाविक और सामान्य उपेक्षा थी।

इंटर कालेज में संस्कृत पढ़ाने वाले मास्टर, जिनका समूचा व्यक्तित्व अष्टाध्यायी के दुरूह और दुष्कर सूत्रों से निर्मित हुआ था। गाँव के चारों ओर दूर दूर तक फैले ऊसर की रेह से जिसने कपड़े धोना सीखा था। वेतन का सारा पैसा बैंकों में जमा करने के बाद जिसने जीवन में कभी 'विदड्राल फार्म' नहीं भरा था। यजमानी के अन्न से जिसने भोजन का खर्च चलाया था। मुलेठी की जड़ों और तुलसी की पत्तियों से सारी बीमारी का इलाज कराने वाले दरिद्र पिता की क्रूर छाया में अभावग्रस्त जीवन जीते चले आए निरंजन खुद भी शांत और मितभाषी स्वभाव के थे। इसीलिए सेठ उन्हें बहुत चाहने लगा था। लेकिन कहा जाता है कि प्रलय से पहले ग्रह, नक्षत्र अपनी अपनी कक्षाओं की मर्यादा तोड़ कर उन्मद उत्सव में नृत्य करने लगते हैं। स्तंभ और रोमांच से पुलकित आकाश थरथराने लगता है। कुछ ऐसी ही स्थितियों में बरगद बाँस की तरह हरकत करने लगता है। फिर सब कुछ तहस नहस हो जाता है। कोई भी जो निरंजन को पहले से जानता रहा होगा उसे यकीन करने में बहुत मुश्किल होगा कि निर्भय सेनानी की तरह हाथों पर अनार रखकर आतिशबाजी करने वाला यह करतबी युवक निरंजन ही है। सेठानी विस्मय से अभिभूत थीं, "देखो, जल न जाना।"

लेकिन निरंजन आँखों पर हाथ की ओट दे कर बारूद की चिनगारियों से खेलते हुए हो हो कर के हँसे जा रहे थे।

रात आधी से ज्यादा बीतने लगी थी। बिजली की निष्प्राण झालरों को छोड़ दें तो मिट्टी के दीए एक एक कर बुझने लगे। शिवाले के सामने चबूतरे पर बैठते हुए सेठानी ने कहा, "सेठ जी तुम्हारी बहुत तारीफ करते हैं। जब तुम छोटे थे तभी तुम्हारी माँ मर गई थीं न। तुम्हारे पिता ने तुम्हें घर से क्यों निकाल दिया! जब तुम होली में घर जाओगे तो तुम्हारी पत्नी के लिए सुंदर सी साड़ी दूँगी।"

कहीं माँ ने दूसरा जनम तो नहीं लिया है निरंजन ने सेठानी को देखा। वर्षों से भीतर जमी बैठी कोई गाँठ जैसे पिघलने लगी। उनकी आँखें छलछला गईं। 'आदमी की तरक्की में उसकी भीतरी प्रतिभा और क्षमता का योग होता है। आदमी के दुष्कर्मों के पीछे परिस्थितियाँ दोषी होती हैं।' - जीवन के इस मूल मंत्र से दुनिया को देखने वाले निरंजन कभी किसी से अपने बाप की शिकायत नहीं करते थे। "अच्छा मैं चलूँ।" उन्होंने सेठानी से कहा और बिना आहट के फाटक खोल कर धीरे से निकल गए। कहीं मेरी बातों से इसका दिल न दुखा हो, सेठानी ने अफसोस के साथ सोचा और भीतर चली गईं।

"कर अपने अपने तप्त अनुभवों की तुलना। घुलना, मिलना।" मन की विचित्र गति होती है। जिसे पहली नजर का प्यार कहा जाता है, वह कैसा होता है। भगवान जानें! लेकिन वाया निरंजन, वह रोज सोचते कि किसी तरह सेठ जी के घर जाने का अवसर मिले। ऐसा कोई अवसर नहीं आता। सेठ जी के प्रति उनके मन में गहरी कृतज्ञता और सम्मान था। उनके लेखे, सेठानी जैसी सहृदयता और उन्मुक्त चंचलता कहीं न थी। वह माँ, बहन जैसे न जाने कितने कितने आत्मीय रिश्तों को तलाशते और मन की असीम और पवित्रतम ऊँचाइयों पर ले जा कर उन्हें प्रतिष्ठित करते। और वे थीं कि अपने लिए सुंदरतम स्थान तलाशते हुए जिद कर के उनके पहलू में नन्हीं बच्ची की तरह चिपक जातीं। निरंजन स्नेहपूर्वक उनके बालों और उनकी आँखों को सहलाने लगते। खरगोश की तरह काली, गोल और बड़ी बड़ी चंचल आँखें। वासना से बड़ा बहुरूपिया कोई नहीं - रात को नींद न आने पर वह यही सब सोचा करते और सोचते - तुमसे बड़ा कृतघ्न कोई नहीं है निरंजन। जिस आदमी ने शहर में तुझे ठौर दिया उसी की बीवी के बारे में...। ऊपर से आदमी दिखने वाला तू कुत्ता है। तुम्हारे सगे बाप ने तुम्हें घर से निकाल दिया था तब तुझ बिलबिलाते भिखारी को इसी आदमी ने सहारा दिया। वह तरह तरह से अपने मन को बाँधते। लेकिन मन के पंख हजार, रात के सन्नाटे में शिवाले के सामने चबूतरे पर अकेली बैठी सेठानी जैसे पुकार रही हो - निरंजन के लिए अब एक क्षण भी असंभव हो जाता। सेठ साला अपने कमरे में फोंऽ फोंऽ करता सो रहा होगा। नीच, कमीना, सेठ! कैसे उसे नींद आती है बच्ची जैसी बीवी को जागता छोड़ कर। अगर इसे इस उम्र में शादी ही करने की पड़ी थी तो क्या कोई स्थूल, भोंड़ी और दुखियारी विधवा नहीं थी?

पता नहीं साहित्याचार्यों ने श्रृंगार में ऐसी कोई व्यवस्था दी है या नहीं? संयोग से पहले ही वियोग ने पंख फैलाना शुरू कर दिया - पंख होते तो उड़ आती रे, रसिया ओ बालमा!

https://www.hindiadda.com/ek-khandit-premakatha/

- ऊल जुलूल फिल्मों के थके हारे दुखियारे गीत उनके मन की गहराइयों में डूब उतरा रहे थे।

एक दिन सेठानी ने चाट बतासा खाने की इच्छा जाहिर की। मनोहर लाल जी को वर्षों पुराना बवासीर था। चाट बतासे के नाम पर काँप जाते। शाम को उन्होंने निरंजन से कहा, "मालकिन को कहीं जाना है। साथ चले जाओ।"

मंदिर के सामने वाली चाट की दुकान पर शाम को दूर तक लाइन लगती है। वहाँ जितनी भी औरतें थीं, सेठानी के तेजोदीप्त सौंदर्य की गरिमा के सामने सब की सब फीकी लग रही थीं। निरंजन का मन प्रसन्न हो रहा था - बतासे और चाट खाने का तरीका भी कितना सुसंस्कृत है सेठानी का। उन्होंने पूछा, "और कुछ चाहिए आपको?"

"नहीं।" सेठानी ने कहा, "तुम क्यों नहीं कुछ खा लेते।" "और सुनो!" सड़क पर चलते हुए सेठानी बोलीं, "जब तुम मेरे साथ सड़क पर चलो तो आप न कहा करो। क्या अपने सेठ की तरह आप की रट लगाए रहते हो।"

"आप मुझसे बड़ी हैं। और फिर सेठ जी क्या सोचेंगे?" निरंजन की देह में फुरफुरी हो रही थी।

"तो उन्हीं के सामने आप कह कर पेट भर लेना। यहाँ सड़क पर नुमाइश करना जरूरी है क्या?"

अभी वे थोड़ी ही दूर गए होंगे कि एक लड़का सड़क की उस पटरी से दौड़ता हुआ आ कर बोला, "अरे निरंजन, भाभी जी से परिचय तो करा दो।"

सेठानी ने लड़के को देखा और मुँह बिचका कर उपेक्षा से आगे बढ़ गईं। लड़का थोड़ा आहत हुआ।

निरंजन के बताने पर कि यह मेरे सेठ जी की पत्नी हैं। चुड़क्कों की तरह बिना जाने बूझे तुम्हें ऐसी कोई बात नहीं बोलनी चाहिए थी। लड़का कुटिल हँसी हँसता हुआ निरंजन की आँखों में झाँक कर मुस्कुराया, "उस बूढ़े खूसट मनोहर लाल की? ठीक है गुरू, फाँसे रहो।"

अगर आपके साथ पत्नी है, और खुदा न खास्ता सुंदर है तो आप भले ही बचना चाहें, लोग घेर कर आपका हाल चाल पूछेंगे। नमस्ते करेंगे। आपकी इज्जत का दायरा बढ़ा कर उसी में सिर घुसाने की कोशिश करेंगे। शरीफ और समझदार लोग बहन और

बेटियों के साथ सड़क पर नहीं निकलते। कब, कौन दूसरे दिन अफवाह फैला देः "अरे भाई, आजकल अमुक का बड़ा जलवा है।"

सेठानी आगे जा कर खड़ी हो गई थीं। पता नहीं क्या सोच रही होंगी सेठानी? संकोच में डूबे निरंजन उनसे आँख मिलाने का साहस नहीं कर पा रहे थे। "तुम्हारा दोस्त था क्या?" सेठानी ने हँस कर चुप्पी तोड़ी।

"मेरे गाँव का एक लड़का यहीं पान की दुकान खोले है, उसी का परिचित है।" निरंजन ने सफाई दी। वे लोग देर तक सड़क पर टहलते रहे।

"बाजार बंद होने का समय हो रहा है।" सेठानी ने कहा, "चलो दुकान पर चलते हैं। वहीं से सेठ जी के साथ घर चली जाऊँगी।"

निरंजन सोच रहे थे कि टहलने के बहाने पैदल ही उन्हें घर तक छोड़ने जाएँगे। इस बीच थोड़ा अँधेरा भी हो जाएगा। लेकिन... उन्हें खुद भी तो स्पष्ट न था कि वे क्या चाहते हैं? सेठ जी के प्रति उनके मन में कृतज्ञता थी लेकिन यह ईर्ष्या भाव...? मन की रुचियाँ तर्क की मोहताज नहीं होती हैं।

निरंजन जहाँ रहते थे, वह एक अँधेरी गली के मकान की तीसरी मंजिल पर बनी शांत और हवादार कोठरी थी। नीचे जीने के पास एक सामूहिक उपयोग का अँधेरा कमरा था। सुबह इसी कमरे में आ कर वे तरोताजा होते और यहीं से उनकी दिनचर्या शुरू होती थी। पचहत्तर रुपए महीने पर यह जगह उन्हें मिली थी। दिन भर कोठरी बंद रहती थी। उपयुक्त जगह देख कर एक गौरैया ने वहीं घोसला बना लिया था। कुछ दिन बाद घोसले में से चूजों की आवाजें आने लगीं। गौरैया बाहर से दाने ले कर आती तो बच्चे चूँ चूँ करते हुए घोसले के बाहर तक सिर निकाल देते। उड़ने की कोशिश करते हुए बच्चों को गौरैया रोक देती। निरंजन लेटे लेटे यह सब देखा करते। एक ममत्वमयी आत्मीयता उनकी कोठरी में फैल रही थी।

अतिशय विश्वास करके सेठ जी ने दुकान की एक चाबी निरंजन को दे दी थी। सुबह पहले वही आते और दुकान को खोल कर साफ सफाई करते। एक दिन उन्होंने देखा कि शटर के भीतर एक बड़ा सा लिफाफा पड़ा है। प्रति. सेठ मनोहर लाल जायसवाल...।

निरंजन ने सोचा, अगर सेठजी पूछेंगे तो बता दूँगा कि लिफाफा खुला पड़ा था। उन्होंने यूँ ही अन्यमनस्क भाव से लिफाफा खोला। भीतर दस पृष्ठों का लंबा पत्र था :

"बूढ़े, खूसट, सेठ मनोहर लाल साले, चूतिए!!" इन दो तीन लाइन के संबोधन के बाद जो कुछ लिखा था उसका सार यह कि :

सेठ, जिस जमीन को खरीद कर आज तुम मालिक बने हुए हो, उस पर मैंने वर्षों खेती की है। इसके पहले वह पूरे मुहल्ले की सामूहिक चारागाह थी। यकीन न हो तो देख लेना उसके पीछे दाईं तरफ मस्सा है और बाईं जाँघ पर दो तिल। उसकी नाभि के नीचे फोड़े का निशान है। वगैरह-वगैरह। पत्र के पूरे तीन पृष्ठों में सेठानी के अंतरंगों की सूक्ष्म विवेचना सप्रमाण प्रस्तुत करके पहचान मुकम्मल की गई थी। पत्र के अंत में सेठ जी के लिए किंचित शुभकामनाओं का संकेत था - अपने पूरे मुहल्ले को कुंभ स्नान कराने का पुण्य तो तुम्हें जरूर मिलेगा। तुम्हारे सात तालों के भीतर भी वह आशिक तलाश लेगी।

पत्र पढ़ने के बाद निरंजन की आँखों के सामने अँधेरा छा गया। सिर घूमने लगा। यह किसी बेवफा आशिक का गुमनाम विद्रोह था। सेठानी को ले कर उनका मन धराशायी होने लगा। यह समझदारी का काम उन्होंने किया कि पत्र को पैंट की भीतरी जेब में डाल कर सेठ जी के आने से पहले पूरी तरह प्रकृतस्थ हो कर बैठ गए थे। यह पत्र किसी के हित में नहीं था। सच्चे शुभचिंतक का फर्ज होता है कि अदृश्य दुश्मन की सूचना समय रहते मित्र को दे देगा। दोपहर के समय सेठ जी से फुर्सत ले कर वह बिना बताए उनके घर पहुँच गए।

सेठानी रसोई में कुछ बना रही थीं। गाढ़े मैरून रंग की साड़ी का पीला बार्डर पसीने से भीग कर देह से चिपक गया था। सेठानी काम में तल्लीन थीं। किसी शांत आश्रम में ऋषि कन्या के पवित्र सौंदर्य की स्निग्ध आभा फैल रही थी। उन्होंने निरंजन को देख कर पूछा, "कैसे आए हो?"

- "मैंने अपने आने की बात सेठ जी को नहीं बताई है। यह आपके लिए पत्र है।" पत्र थमा कर निरंजन झटके से बाहर निकल गए।

दूसरे दिन सेठ जी ने दुकान पर आते ही कहा, "निरंजन घर चले जाना। मालकिन ने किसी काम से बुलाया है।"

दोपहर के बाद जब निरंजन पहुँचे तो सेठानी ने सावधानी से अहाते का फाटक बंद कर दिया। उस दिन वह पहली बार उन्हें भीतर वाले कमरे में ले गईं। पुराने हालनुमा कमरे का वह सुसज्जित बेडरूम था। एक ओर शीशे की टेबुल के पास दो मोढ़े रखे हुए थे। वहीं निरंजन को बैठा कर वे चाय बनाने चली गईं। निरंजन एक एक चीज को गौर से

देख रहे थे। डबल बेड पर आसमानी रंग की चादर। एक ओर करीने से रखे हुए दो कुशन। सामने आदमकद आइने के ऊपर लाल पीली मोतियों से गुँथी सफेद ऊन की मुलायम झालर लटक रही थी। किनारे काँच से बंद आलमारी में रंग बिरंगी चूड़ियाँ, कंगन, नेलपालिश, सौंदर्य प्रसाधन के ढेर सारी क्रीम, पाउडर के बीच एकाध अंतरंग वस्त्र भी सुशोभित हो रहे थे।

सेठानी जब चाय ले कर आईं तो उनके गोल चेहरे पर फैला हुआ तनाव स्पष्टतः दिखाई दे रहा था। लग रहा है सारी रात सोई नहीं हैं। आँखों में सूजन थी। किसी शिकारी कुत्ते ने खरगोश के बच्चे को दाँत गड़ा दिया है। चेहरे का चिर परिचित लावण्य गायब हो गया। जुकाम की तरह नाक सुड़कते हुए तरह तरह की आशंकाओं से डरी, गंभीर आवाज में उन्होंने धीरे से पूछा, "यह पत्र तुम्हें कहाँ मिला था?"

"सुबह जब दुकान खोला तो शटर के पास भीतर पड़ा था।" निरंजन ने बताया।

सेठानी गंभीर हो कर कुछ सोचने लगीं, पूछा, "तुमने किसी से जिक्र तो नहीं किया?"

"नहीं। इसीलिए तो सेठ जी से छिपा कर यहाँ आया था। लेकिन यह है कौन?" निरंजन खुद भी पूरी रात सो नहीं सके थे।

"अच्छा हुआ, पत्र तुम्हें मिला।" सेठानी ने कहा, "सेठ जी वैसे भी शक्की हैं। हर समय ऊल जुलूल बातें पूछा करते हैं। मैं तो बर्बाद हो जाती।" आशंकाओं ने उन्हें जगह जगह नोच बकोट लिया था। अपने को सँभालने की कोशिश में भी उनकी आँखें डबडबा गईं। वे उठीं तो लगा भहरा कर गिर जाएँगी। डबल बेड पर औंधे मुँह गिरकर वे जोर जोर से सुबकने लगीं।

किंकर्तव्यविमूढ़ निरंजन। वे बेड तक गए लेकिन कैसे छुएँ - "आप रोइए मत! कोई देखेगा तो क्या सोचेगा। मेरे जीते जी आपको कुछ नहीं हो सकता।"

अजीब असमंजस और ऊहापोह में खड़े खड़े वह देर तक सोचते रहे। सेठानी रोए जा रही थीं। अंत में उन्होंने सेठानी को पकड़ कर खड़ा करने की कोशिश की, लेकिन कृश हो चुकीं सेठानी ने अपने सिर को उनके कंधे पर टेक दिया। निरंजन अचकचा गए। साँकल बजने की आहट हुई। "शायद नौकरानी बर्तन धोने आई है। तुम इत्मीनान से बैठ कर चाय पियो। मैं देखती हूँ।"

हाथ मुँह धो कर वे फाटक तक गईं, "तुम थोड़ी देर बाद आ जाना।" उन्होंने नौकरानी से कहा।

समय बीतता गया। निरंजन मुख्य रूप से दुकान का ही काम देखते थे। जब कभी जरूरत पड़ी तो घर भी चले जाते। उनके रहन सहन में भी तब्दीली आने लगी। शहर की आबोहवा ने असर दिखाना शुरू किया। देखने वाले यही समझते कि सेठ जी के घर का लड़का है। मुहल्ले में जो लोग जानते थे कि सेठ जी के आगे पीछे कोई नहीं है, उन्हें इत्मीनान था कि सेठानी के घर का लड़का है। सब उनके मेहनती स्वभाव और लगन की तारीफ करते - इस लड़के ने तो सेठ जी के घर की रंगत ही बदल दी। अब अक्सर रोज ही सेठ जी के घर पर कोई न कोई जरूरी काम निकल आता। "सच निरंजन, अगर तुम न होते तो मेरा मन ही यहाँ न लगता।" सेठानी कहतीं।

रोज दोपहर को, जब नौकरानी बर्तनों की सफाई करके चली जाती, सेठानी बादाम का ताजा हलुवा बनातीं। गठिया, हाजमा और बवासीर आदि सारी बीमारियाँ शरीर के कमजोर होने का लक्षण थीं। इस शक्तिवर्द्धक नुस्खे को उन्होंने अपनी माँ से सीखा था। निरंजन रोज दोपहर बाद आ कर सेठ जी का नाश्ता ले जाते थे। सेठानी खुद दो पतली चपाती और मूँग की सादी दाल के अलावा कुछ नहीं लेती थीं। पति लोग दूसरी जगह भटक जाते हैं, इसके लिए पत्नी भी जिम्मेदार होती हैं - सेठानी की माँ ने उन्हें शादी के पहले ही सिखा दिया था। वह अपने सौंदर्य और स्वास्थ्य के प्रति ज्यादा सजग रहती थीं। पुरुष की उम्र चाहे जो हो, औरत को चाहिए कि हमेशा उसे बच्चे की तरह पुचकार कर रखे। "निरंजन तुम कितना दौड़ते हो?" सेठानी दो चम्मच हलुवा और गिलास भर गाय का दूध उन्हें भी देतीं। रोज रात को सोने से पहले वह सेठ जी को गुनगुना दूध पिलाना अपना परम कर्तव्य मानती थीं। सेठ जी बच्चे की तरह हठ करते तो वह माँ की तरह पुचकारतीं। अपनी कसम देतीं।

निरंजन न सिर्फ उनके सौंदर्य बल्कि उनकी बाल सुलभ चंचलता और ममतालु हृदय पर भी न्यौछावर थे। दीवाली के बाद होली और न जाने कितनी छुट्टियाँ बीत गईं। घर तो पहले ही छूट गया था, उन्होंने पत्नी की भी कोई खोज खबर नहीं ली। गोबर और भूसे की तरह बसाती पत्नी।

सोमवार, बाजार की बंदी का दिन था। वह चुपचाप अपनी कोठरी में लेटे हुए कुछ सोच रहे थे। हल्की झपकी में आँख लग गई थी। अचानक उन्होंने महसूस किया कि क्रीम और पाउडर से छन कर आती सेठानी की मादक देह गंध पूरे कमरे में भर गई है। वह चौंक कर उठ बैठे। बाहर कोई नहीं था। मन बेचैन होने लगा। सेठ जी ने कहा था, किसी दिन फुर्सत पा कर वैद्य जी के यहाँ चले जाना, दवाएँ लानी हैं। वह तुरंत पैंट शर्ट पहन कर सेठ जी से दवाओं की लिस्ट लेने चल पड़े।

किसी रिश्तेदार के यहाँ गमी हो गई थी। सेठ जी घर पर नहीं थे। "कैसे आए निरंजन?" सेठानी ने पूछा।

"कमरे पर अकेले था। मन घबड़ाने लगा। तुम्हें देखने चला आया।" निरंजन ने बताया।

सेठानी मुस्कराईं, "नौकरानी निकलने ही वाली है। तुम तब तक मंदिर की ओर चले जाओ। सेठ जी रात से पहले नहीं आएँगे।" सेठानी भीतर चली गईं।

कुछ देर के एकांत क्षणों में अपने को समर्पित कर लेने के बाद निरंजन के मन में वैराग्य जाग उठता। गुमनाम पत्र के आंगिक विवेचन उद्दीपन की भूमिका निभाने लगते। वह पत्नी के बारे में सोचने लगते। पता नहीं गाँव में कैसे रह रही होगी? वर्षों बीत गए, मैंने कोई खोज खबर नहीं ली। पैसा भी नहीं भेजा। शहर आने के पहले की आखिरी मुलाकात याद आने लगती। "मेरी कोई चिंता मत करना" पत्नी ने कहा था, "जैसे तैसे दिन काट लूँगी। समय से खाने पीने की व्यवस्था जरूर कर लेना।" वह धीरे धीरे सुबक रही थी। जीवन की छोटी छोटी जरूरतों को अनंत काल के लिए स्थगित करती हुई उन्होंने अपना सब कुछ एक अदृश्य नियति के हवाले कर दिया। त्याग और करुणा की प्रतिमूर्ति। आत्मग्लानि में डूबते निरंजन अपना बचाव करते आखिर दान और दया ही तो नहीं होता है पति पत्नी संबंध। प्रेम और सेक्स ही तो इसकी बुनियाद है। वह सेठानी को सच्चे दिल से प्यार करते हैं। दुनिया में ऐसी किसी जगह की कल्पना भी नहीं कर पाते जहाँ सेठानी हर समय मौजूद न रहें। मेरे न रहने पर कौन इनकी देखभाल करेगा? सेठ जी इनकी भावनाओं को नहीं समझते। लोग भूखे भेड़ियों की तरह इन्हें निगल जाएँगे। अदृश्य स्वार्थी लोगों से घिरी सेठानी उन्हें अबला और असहाय लगती थीं। एक पल भी उन्हें अकेले छोड़ने की कल्पना मात्र से निरंजन काँप जाते। तभी आकाशवाणी होती; "सात ताले के भीतर भी यह आशिक तलाश लेगी।" कहीं यह सममुच में चरित्रहीन तो नहीं है? बेचारे चरित्रवान, जितेंद्रिय निरंजन दहल जाते और सोचने लगते : "सेठ जी मुझे बेटे की तरह मानते हैं। उन्हें क्या पता...।"

सेठ ने दुनिया देखी थी। निरंजन के बदलाव, सेठानी के हाव भाव, उनकी उदासी, उनका उल्लास सब कुछ देखा था। लेकिन उनका अपना टाइम टेबुल था। समय से खाना पीना, सोना जागना सब कुछ वर्षों से पूर्व निर्धारित चला आ रहा था। वह जीवन और जगत के मर्म को पहचानते थे। क्रय विक्रय, हानि लाभ आने पाई का हिसाब उन्होंने पढ़ा था। गणित ही एकमात्र सत्य है, अपने निष्कर्षों में विवाद की गुंजाइश से परे। लेकिन, किंतु, परंतु, बावजूद और अंततः के ढेर सारे झंझटों विवादों के ताने बाने

से बुना मानव संबंधों का जटिल विवेचन उन्हें कवियों और दार्शनिकों की मानसिक ऐयाशी लगता था। उनके लेखे निरर्थक। उसमें उनकी कोई दिलचस्पी न थी। वह जानते थे कि जब आदमी अपने ही अनुभवों से नहीं सीखता, अपने ही विचारों पर आचरण नहीं करता तब उनकी क्या औकात है जो लोग उनके अनुभवों से सीखें, उनके विचारों से आचरण करें। दूसरों को विद्वान और ब्रह्मचारी बनाना वह फालतू लोगों की मानसिक ऐयाशी मानते थे। जो जैसा करेगा, भोगेगा यह उनका दृढ़ विश्वास था।

और आखिर निरंजन का विकल्प भी क्या है? सेठ जी सोचते - किसी बूढ़े अपाहिज से दुकान का काम तो सँभलेगा नहीं। जब दूसरी पत्नी की मृत्यु हुई थी तो उन्हें वज्रपात का सा सदमा लगा था। खबर सुनते ही उनका साला अपनी पत्नी और बच्चों के साथ आ गया था। इस उम्र में पत्नी की मृत्यु जवान बेटे की मृत्यु से कम आघात नहीं देती। साले ने सांत्वना दी, "सेठ जी हम लोग हैं, आप चिंता न करें। पत्नी घर का काम सँभाल लेंगी।" अब तक बात और थी। रिश्ते नाते दुख में ही तो काम आते हैं। भतीजों की बहुएँ जो अब तक एक गिलास पानी नहीं देती थीं, एक पैर पर हाजिर हो कर सेवा में जुट गईं। सेठ जी की बहन तो जब तब मौका पा कर शिवाले के सामने डाँय डाँय रोने लगतीं। सरहज रोज रात को गरम तेल से मालिश करती थीं। सब एक दूसरे से आगे निकलने की मैराथन दौड़ में पलक नहीं झपकाना चाहते थे। बहन ने एक दिन एकांत देख कर समझाया, "कोई किसी का सगा नहीं है मनोहर। मेरी तो राय है कि कोई लड़का गोद ले लो। तुम्हारे भांजे का छोटा वाला लड़का होशियार भी है और सुंदर भी। पंडित ने बताया भी था कि इसको राजयोग लिखा है।" सेठ जी के आस पास उदार मना शुभचिंतकों का जमघट लग गया था।

यह बता पाना तो मुश्किल है कि विशुद्ध अपनी जरूरत से अथवा लोगों की सामाजिक भावना से पीड़ित और प्रताड़ित हो कर, शायद दोनों का योग था, छह महीने बाद सेठ जी ने सबको बताया कि तीसरी शादी करने की सोच रहे हैं। इस उम्र में शादी करोगे? चारों ओर काँव काँव मच गया। भतीजों ने अपनी अपनी बहुओं को सेठ जी के घर जाने से मना कर दिया - व्यभिचारी आदमी है! कौन भरोसा? बहन ने मायके का शेष दिन बड़े भाइयों के यहाँ बिताना मुनासिब समझा। निंदा पुराण का अखंड पाठ नमक मिर्च मिला कर गाया जाने लगा। सरहज ने ननद की साड़ियाँ और हर संभव सामानों को गठरी में बांधा और लड़कों बच्चों को धमाधम मारते-पीटते घर चली गईं।

"यही है दुनिया!" सेठ जी ने सोचा, "ऐसे ही थोड़े कहा गया है कि धरती शेषनाग के फन पर टिकी है। कुछ लोग फन देखते हैं और कुछ फन की मणि।" सेठ जी अपने लेन

देन के रजिस्टर पर झुक कर हिसाब किताब करने लगते। साला दिन भर लाटरी की दुकान पर पड़ा रहता था। भविष्य की उज्ज्वल उम्मीद में उसने इधर उधार ले कर सिल्क के दो तीन कुर्ते बनवा लिए थे। लोगों से कहता, "बहुत नेक और सज्जन आदमी हैं जीजा जी। विपत्ति पड़ गई। दो दो जगह की व्यस्तता में अब मेरी परेशानी बढ़ गई।" परेशानी कम करने के लिए लौट आई पत्नी ने ही उसे जीजा जी का समाचार दिया। वह दौड़ा हुआ वकील के पास गया, "बहन को सेठ ने जहर दे कर मारा है। केस बन सकता है कि नहीं?"

"पैसा खर्च करना पड़ेगा।" वकील ने समझाया, "पुलिस पैसा ले कर क्या नहीं कर सकती है? बाकी एक साल तक मैं जमानत नहीं होने दूँगा। संगीन मामला है। दाह संस्कार करने वाले सबसे पहले धरे जाते हैं।"

बहन की लाश को ले जाने और जलाने में उसी की भूमिका अग्रणी थी। उस समय वह क्षण क्षण सजग था। खास बनने के चक्कर में कहीं दूसरे रिश्तेदार बाजी न मार लें। कूटनीतिक राजनीति का सबसे उपयुक्त स्थल मृत्यु के शोक समारोहों को माना गया है। ओह, सारी बाजी ही उलट गई - साला हतोत्साहित हो कर शाप दे रहा था, "इस उम्र में शादी! मुहल्ले के शोहदे छत पर कुलाँचे मारेंगे।"

सेठ जी ने टिप्पणी की, "वे तो पिछले दस सालों से कुलाँचे मार रहे हैं।"

सबने बहिष्कार किया। सेठ जी दस पाँच मित्रों को साथ ले कर गए और एक सादे तथा सीमित समारोह में इस सेठानी को ब्याह लाए।

सेठानी निरंजन से बतातीं, "पापा मम्मी से पच्चीस साल बड़े थे। रोज उनके घर आना जाना था। एक दिन भगा ले गए। मुहल्ले में बहुत बदनामी हुई। नानी को सदमा लगा। बिस्तर पर गिर पड़ीं। मरने से पहले उन्होंने पापा को शाप दिया, 'अपाहिज और कोढ़ी हो कर मरोगे। तुम्हारी अपनी बेटी को यही सब भोगना पड़ेगा।' पापा रोज मम्मी को मारते पीटते थे। घर के सारे गहने बेच डाले। शराब, रंडी, लाटरी और जुए की लत लग गई थी। सालों बिस्तर पर ही पेशाब और पाखाना करते रहे। पूरे शरीर पर सफेद दाग हो गए। भैया बाहर नौकरी करते थे। छुट्टियों में आए तो माँ से कहने लगे, 'चारों ओर बदनामी फैल रही है।' मेरी शादी की समस्या थी। पापा की मृत्यु पर सबने राहत की साँस ली। भैया ने ही मेरी शादी तय की। मुझसे सारी बातें छिपाई गई थीं। बताया गया कि लड़के की दूसरी शादी है, लेकिन स्वस्थ और सुंदर है। पैंतीस साल उम्र बताई गई थी। शादी के समय ही मैंने पहली बार सेठ जी को देखा। यहाँ आने पर एक दिन जब सेठ जी साड़ियों की खरीदारी करने के लिए मुझे एक दुकान पर ले गए तो दुकानदार ने

कहा कि आपकी बिटिया को यह साड़ी जरूर पसंद आएगी। सेठ जी बिना कुछ बोले चुपचाप उठ लिए। तब से मेरे साथ कहीं घूमने या बाजार जाने के लिए नहीं निकलते।" सेठानी उदास हो जातीं, "नानी का शाप मेरे ही माथे पर पड़ा है।" और उनकी आँखें डबडबा जातीं।

निरंजन सोचते - जीवन में दुख कितने कितने रूप बदल कर कहाँ कहाँ प्रवेश कर जाता है, सेठानी को ले कर उनके मन में पैदा होने वाली करुणा ने आशंकाओं के सारे कलुष को धुल दिया था।

आठवाँ महीना था। डाक्टर ने भारी सामान उठाने और ज्यादा चलने फिरने की सख्त मनाही कर दी थी। "घर है, कुछ न कुछ तो लगा ही रहेगा", सेठानी ने सेठ जी से कहा, "माँ को बुलवा लेती हूँ।"

सेठ जी ने साफ कर दिया, "ससुराल वालों का ज्यादा दखल ठीक नहीं होता है। मैं बहन को बुलवा लूँगा।"

सेठानी का चेहरा बुझ गया। शादी के बाद भाइयों ने खोज खबर नहीं ली थी। सोच रही थीं, इसी बहाने माँ आ जातीं। अस्पताल से 'चेकअप' करा कर लौटते समय एक दिन उन्होंने निरंजन से कहा था, "सेठ जी से कह कर तुम्हें भिजवा दूँगी। माँ को लिवाते आना।"

निरंजन के मन में बहुत दिनों से इच्छा थी वह घर देखने की, जहाँ सेठानी का बचपन तरह तरह की शरारतें करता हुआ पला बढ़ा था। घर का चौखट और वह स्कूल जहाँ वह पढ़ती थीं। "घर के पिछवाड़े अहाते में अमरूद का पेड़ है।" सेठानी ने उन्हें बताया था, "हम लोग चढ़ कर अमरूद तोड़ा करते थे। कितनी बार तो मैं गिर जाती।" एक भुतही हवेली की अमूर्त और रोमांचित करती अवधारणा सी बन गई थी निरंजन के मन में।

"मेरे मन में बहुत इच्छा होती है तुम्हारा घर और वह शहर देखने की, जहाँ तुम पली बढ़ी हो।" निरंजन सेठानी से कहते। उन्हें लगता कि वहाँ के चप्पे चप्पे पर सेठानी की छाप होगी। उनके बचपन की शरारतें और उनके कमर की करधनी हर समय वहाँ की हवाओं में बजती रहती होंगी। सबको मोहित कर लेने वाली आत्मीय सुंदरता की निश्छल देवी को आखिर कोई कैसे भूल सकता है। उन्हें लगता कि सेठानी के चले आने के बाद वहाँ अब सारे लोग उदास रहते होंगे।

जब हम किसी को प्यार करते हैं तो वह यकीकन सारी दुनिया में सबसे सुंदर होता है। ईश्वर की तरह। उसे पुकारते हुए हमारी वाणी में प्रार्थना की सी विनम्र पवित्रता होती है। उसकी इच्छाओं का अनादर संभव ही नहीं है। सेठ जी ने एक ही झटके में कैसे इनकार कर दिया - निरंजन सोच रहे थे। उन्होंने धीरे से कहा, "सेठ जी, ऐसे समय में माँ ज्यादा अच्छे ढंग से देखभाल करेगी।"

"आजकल तुम्हारा मन दुकान पर नहीं लगता" सेठ जी ने झिड़क दिया, "कम से कम घरेलू मामलों में तो दखल न दिया करो।"

बेचारे निरंजन।

सेठानी भीतर वाले कमरे में सेठ जी से फुसफुसा रही थीं, "तुमने ही तो बेवजह तरजीह दे कर इसका मन बढ़ा रखा है। वैसे भी मुझे इसका बार बार भीतर कमरे तक चला जाना अच्छा नहीं लगता है। नौकर को नौकर की ही तरह रखना चाहिए।"

रात को निरंजन सामान ले कर घर आए। बरामदे में रख कर उन्होंने आवाज दी और तेजी से बाहर निकलने लगे। सेठानी ने आगे बढ़ कर रास्ता रोक लिया, "नाराज हो?" उनकी आँखें मुस्करा रही थीं। "क्या करूँ? मजबूरी है। आखिर यह सब तुम्हारे लिए तो करना पड़ता है। सेठजी को जब तब शक होने लगता है।"

निरंजन की आँखें डबडबा गईं, "यह तो सच है कि मैं नौकर हूँ।"

"बहुत बन रहे हो।" सेठानी ने उनका हाथ पकड़ा और अपने पेट पर ले जा कर सहलाने लगीं, "तुम्हारी बिटिया सो रही है इस समय। पूरे दिन लात मारती रहती है चुड़ैल। हो जाय तो तुम्हीं सँभालना।"

निरंजन को बेटी की ही इच्छा थी। पिघल गए। सेठानी ने जल्दी जल्दी उनके गाल पर दो तीन चुम्मी ली, "चले जाओ, सेठ जी के आने का समय हो रहा है।"

"यह औरत तो जादूगरनी है। कैसा भी गुस्सा हो टिकने नहीं देती। अगर यह सेठ साला मर जाता तो मैं सारी जिंदगी नौकर बन कर ही इनकी सेवा करता।" निरंजन सोचते हुए चले जा रहे थे। एक साइकिल वाले से टकराने पर चेतना लौटी। "देख कर चलो भैया।" साइकिल वाले ने कहा।

दो तीन लोग गली के चबूतरे पर बैठे थे, हँस पड़े, "सेठानी का नशा है भाई! कुछ दिखाई नहीं देगा।"

निरंजन काँप गए - खैर, खून, खाँसी, खुशी, बैर, प्रीत, मदपान...। कहते हैं, पाताल का प्रेम भी आकाश में महकता है।

एक दिन उनके गाँव का एक आदमी उन्हें खोजते हुए दुकान पर पहुँच गया। निरंजन ने दौड़कर उसके पाँव छुए और मन ही मन सोचा ई ससुर को पता किसने दे दिया? उन्होंने सेठ जी को बताया, "गाँव के हैं, चाचा लगते हैं।"

"अस्पताल आया था।" चाचा ने बताया, डाक्टर ने दवा दी है। खून और पेशाब की भी जाँच हुई है। डाक्टर कल एक्स-रे रिपोर्ट देखेगा। एक एक दुकान पर पूछते हुए आ रहा हूँ। सोचा रात तुम्हारे यहाँ रुक जाऊँगा। इस बीच वह बार बार सेठ जी की ओर देख रहे थे। अपनी रहस्य भेदी नजरों से जैसे कुछ इत्मीनान पाना चाहते हैं।

रास्ते भर, पूरी शाम और रात को सोते समय तक चाचा गाँव की ही बातें करते रहे। निरंजन की इन सब बातों में कोई रुचि न थी। वह जानते थे कि ज्यादा बात किया तो यहीं खूँटा गाड़ कर बैठ जाएँगे। महीने भर रहेंगे और दिन दुपहर मौका पा कर पड़ोस में शिकायत करेंगे। गाँव में सब साले भैया, चाचा और दादा ही लगते हैं, लेकिन मौका पा कर ऐसा खूँटा ठोंक देंगे कि सारी उमर बीत जाएगी और वह टस से मस न होगा। गाँव की याद करके उनका मन घृणा से भर गया।

गाँवों में लोग ईर्ष्यालु और चतुर होते हैं। बेवकूफी उनकी असलियत नहीं महज अभिव्यक्ति होती है। चाचा को यह भाँपते देर नहीं लगी कि मेरा यहाँ आना इसे अच्छा नहीं लग रहा है। ज्यादा शहरी बन रहा है। खैर, मुझे क्या? रात भर रहने का ठिकाना चाहिए था। साँप और नेवले का खेल चलता रहा।

दूसरे दिन सबेरे चाचा ने कहा, "बेटे निरंजन, अस्पताल में भीड़ रहती है। तुम शहर में रहते हो। सब तुम्हारा जाना सुना है। डाक्टर से बात कर लेना।" भीतर भाव यह था कि सेठ के यहाँ काफी पैसा कमाया है। एक्स-रे और दवाओं के अलावा घर तक का किराया भाड़ा तो दे ही देगा।

निरंजन ने बेरुखी से कहा, "सुबह से दुकान खोल कर बैठना पड़ता है। शाम तक तो मुझे फुर्सत ही नहीं मिलती। यहाँ मकान मालिक भी भीड़ भाड़ पसंद नहीं करता। आप चले जाइएगा।"

अब जबकि जाना ही है तो पता नहीं अवसर मिले न मिले, चाचा जी बैठ गए, "गाँव में सब लोग तुम्हारी बहुत तारीफ करते हैं। कहते हैं तीन साल हो गए, निरंजन गाँव नहीं

आता। खैर, तुम्हारे पिता ने ही कौन भलाई की? ऐसा आचरण तो दुश्मन भी नहीं करता है।"

निरंजन ने अन्यमनस्क भाव से कहा, "कोई बात नहीं चाचा। आजकल तो लोग अलग होते ही हैं। मैं तो खुद उनके बारे में सोचता हूँ कि गाँव में अकेले कैसे रहते होंगे। लेकिन शहर आया हूँ तो कुछ बन कर ही लौटूँगा।"

"लेकिन वे अब गाँव में कहाँ हैं भैया।" चाचा का मुँह अचरज से खुल गया, "अरे, तुम इतने शहरी हो गए कि बाप तक की खबर नहीं।"

"क्या हुआ उन्हें?" निरंजन की समझ में कोई बात नहीं आई।

अब आया है होश ठिकाने, चाचा ने सोचा, बताऊँगा, सब कुछ बताऊँगा लेकिन इत्मीनान से, उन्होंने थैली में से सुर्ती और चूना निकाल कर मलना शुरू किया, "अरे वह तो कब की बात है। सारे गाँव में तूफान आ गया था। लोगों ने बहुत समझाया लेकिन किसी की नहीं माने। बीमार हो गए थे। सबसे कहते, मेरे लौंडे को सेठानी ने फाँस लिया है। रखैल हो गया मेरा लौंडा। उन्होंने सारा खेत और बैंक का पैसा, घर दुआर सब कुछ रामजतन बो कुम्हारिन को रजिस्ट्री कर दी। वही रात दिन उनकी सेवा करती थी। खुद कहीं चले गए। कोई बता रहा था कि हरिद्वार में साधू हो गए हैं। गाँव में लोग कहते हैं कि कुम्हारिन ने एक रात सोए में ही उन्हें जड़ी सुँघा दी थी।"

गाँव पर आठ एकड़ खेत था। बाप ने बे दखल कर दिया - निरंजन के तन बदन में आग लग गई। पत्नी ने एक बार कहा था, "मुझे बाबूजी की आदत अच्छी नहीं लगती।"

"क्या बात है?" निरंजन ने पत्नी से पूछा।

"जब तुम बाहर रहते हो तो बार बार भीतर कमरे तक चले आते हैं।" पत्नी ने बताया "आज मुझसे कह रहे थे कि मुझे खुश कर दोगी तो तुम्हें सुखी रखूँगा।"

अब डाँय डाँय करने से क्या होगा? जिसकी जो मर्जी हो करे। निरंजन इन दिनों आकाश की उन बुलंदियों पर थे जहाँ से सारी दुनिया कीट पतंगों की तरह दिखाई देती है। बाप, घर और गाँव अँधेरी नाली के बिलबिलाते कीड़े हैं। इनके बारे में क्या सोचना, कहने लगे, "अपाहिजों और कोढ़ियों के लिए बाप दादे की जायदाद होती है। मैं तो थूकता हूँ बाप पर, उसकी जायदाद पर, घर, गाँव और सारे गाँव वालों पर पेशाब करता हूँ।"

उत्तेजना में उनके गले की नसें खिंच कर उभर आई थीं। मुँह से थूक निकल रहा था। चाचा के मुँह पर सचमुच ही उसने थूक दिया। कहाँ तो वे उसकी औकात बताना चाह रहे थे लेकिन इसने तो पटक कर ही कुटम्मस कर दी। वे भकुवा गए। क्या हो गया है इसे? गाँव का सबसे सीधा और शरीफ लड़का था।

निरंजन कहने लगा, "चाचा कह दे रहा हूँ तो सचमुच में अपने को चाचा मत मान लेना। अब कभी यहाँ मत आइएगा। मैं गाँव वालों की शक्ल भी नहीं देखना चाहता। सब जानता हूँ। शहर में चापलूसी करके खाएँगे। हगेंगे। और गाँव में जाकर शिकायत करते हैं।"

मिल गया पाहुर - सड़क पर चलते हुए निरंजन ने सोचा, अब दुबारा कभी नहीं आएँगे। उसने चैन की साँस ली, चलो ठीक रहा।

हफ्ते भर बाद एक दिन सेठजी ने बताया, "मालकिन की माँ आई हैं। घर चले जाओ। मंदिर दर्शन करने जाएँगी।"

जिसकी रचना इतनी सुंदर, वह कितना सुंदर होगा? बिना एक पल गँवाये निरंजन अदृश्य ममत्व की तलाश में दौड़ पड़े। वह सोच रहे थे, सचमुच जादूगरनी हैं सेठानी। उस दिन मंदिर के सामने अँधेरे में फुसफुसाई थीं, रानी बन कर आई हूँ तो राज करूँगी। देखती हूँ कैसे आती हैं इनकी बहन जी। फिर रात भर पता नहीं कौन सी मानसून चली जो सेठ जी धराशायी हो गए।

अपनी बहन के लड़के को साथ ले कर आई थीं माँ।

"यह मेरा मौसेरा भाई है।" सेठानी ने दिखाया - एक नंग धड़ंग लड़का असभ्य तरीके से लुंगी बांधे सेठानी के बिस्तर पर ही सो रहा था। सेठानी की मैक्सी के ऊपर उसी खूँटी पर उसका पैंट शर्ट टँगा था। क्या बूचड़खाना बना रखा है इन लोगों ने, निरंजन ने सोचा।

"इतना हँसोड़ और गप्पी है कि तुम इसकी बातें सुन कर लोट पोट हो जाओगे।" सेठानी बता रही थीं और बोलीं, "मम्मी, यह तो थका हुआ है। तुम निरंजन के साथ चली जाओ।"

निरंजन ने तभी पहली बार माँ को देखा। सारी उम्मीदों और कल्पनाओं को ध्वस्त करती माँ। पहली नजर में वह उन्हें बाइयों की तरह लगीं। उनका पोपला मुँह पान चबाने की वजह से हिल रहा था। रिक्शे पर पसर कर बैठते हुए उन्होंने जरा भी नहीं

सोचा कि निरंजन भी बगल में बैठेगा। वह एक ओर दुबक कर बैठे। बूढ़ा के मुँह से सड़े तंबाकू जैसी दुर्गंध आ रही थी।

अगर सब कुछ ठीक ठाक रहा तो अगले महीने की दस तारीख तक बच्चा होगा। डाक्टरों ने यही तारीख बताया था। लेकिन सेठानी कहतीं, "मैं होली के दूसरे दिन पैदा हुई थी। दोपहर तक सब लोगों ने रंग खेला। उसी दिन शाम को। देखना निरंजन, तुम्हारी बिटिया भी उसी दिन पैदा होगी।"

निरंजन ने कुल जोड़ कर बीस हजार रुपए बैंक में जमा किए थे। दुकान पर जा कर उन्होंने सोने की करधनी खरीदी बिटिया के लिए। सेठानी ने कहा, "इसकी क्या जरूरत है।" उनकी आँखों में चमक उभर आई, "देखूँ तो कैसी है? अबसे यह सब न करना।" उन्होंने उसे मुट्ठी में दबाया और सुरक्षित बक्से में रख आईं, "जब पैदा होगी तो सबसे पहले यही पहनाऊँगी।"

अति संवेदनशील समय है। ऐसे में रात दिन चौकसी और सावधानी जरूरी है। पाँव ऊँच नीच पड़ जाए तो जच्चा बच्चा दोनों के लिए खतरा बना रहता है। सेठजी ने अपना बिस्तर ऊपर वाले कमरे में लगा लिया। सेठानी माँ के साथ अपने कमरे में सोती। हवेलीनुमा मकान में कमरों की क्या कमी? लेकिन मौसी का लड़का श्यामल रिश्ते में भाई लगेगा, उसी कमरे में वह भी सो जाता। सेठानी उसे सामल और कभी कभी श्याम कहती हैं। वह उन्हें बतासा। बतासा की तरह गोल मटोल और हल्की। सेठानी ने निरंजन को बताया, "बचपन से ही यह मुझे इसी नाम से चिढ़ाता था। एक बार तो वैष्णो देवी जाने के लिए इसने मेरा रिजर्वेशन भी इसी नाम से करा दिया था।"

माँ और सामल से हर समय घिरी रहतीं सेठानी। निरंजन परेशान थे। बात करने का समय ही नहीं मिलता। माँ मंदिर में घंटों पूजा करती रहती थीं तो सामल बतासा के पास ही बैठ कर जाने कैसी कैसी ऊल जुलूल बातें किया करता। उसकी कुरुचिपूर्ण बातों पर भी सेठानी की तल्लीनता और हँस हँस कर मजा लेना निरंजन को अच्छा नहीं लगता था। सामल के लिए निरंजन का वहाँ होना न होना कोई मतलब नहीं रखता। वह कभी बतासा के बाल पकड़ कर खींचता तो कभी गालों पर चिकोटी काट लेता। एक दिन तो हद ही कर दी। निरंजन ने देखा कि सेठानी को गोद में उठा कर चक्कर खिला रहा है, "देख मौसी, अब भी कितनी हल्की है बतासा।" सब होऽ होऽ करके हँस रहे थे। ऐसी घिनौनी बेशर्मी! बच्चे को कुछ हो जाय तो? यह बुढ़िया यहाँ इसी लिए आई है क्या? निरंजन के तन बदन में आग लग गई। भावातिरेक में उनका मुँह कुछ कहने के लिए खुला और फिर चुपचाप बंद हो गया।

अब तक निरंजन उस घर के कोने में थोड़ी सी जगह घेरने वाले मिट्टी का दीया थे। कोने की थोड़ी सी जगह। लेकिन उस घर का सब कुछ उन्हीं की रोशनी में हिलता डुलता था। अब सब कुछ बदलने लगा। सामल उन्हें नौकर से ज्यादा अहमियत ही नहीं देता। एक दिन किसी तरह फुर्सत निकाल कर घर आए तो उसने तत्काल उन्हें पान लाने भेज दिया। कभी तंबाकू, कभी पुड़िया और कभी कभी सिगरेट भी लाने के लिए भेज देता था सामल।

निरंजन की सारी रात मिलन की योजनाएँ बनाती बीत जाती। सेठानी तो अपनी ओर से कोई प्रयास ही नहीं करती हैं - वह झुँझलाते। सेठानी कहतीं, "मेरी मजबूरी है। घर में माँ हैं, श्यामल है।" खैर माँ की तो कोई बात नहीं, संतोष कर लेते लेकिन श्यामल पर जल भुन जाते निरंजन। कब तक रहेगा साला?

"साला ही तो है तुम्हारा।" सेठानी पुचकारतीं, "काहे चिढ़ते हो? मुझसे पाँच साल बड़ा है, लेकिन बच्चों जैसी आदतें। भूतों की ऐसी सच्ची सच्ची कहानियाँ सुनाता है कि मैं तो डर के मारे कान में उँगली डाल लेती हूँ।"

लोफर कहीं का! उस दिन पान लाने के लिए जाते समय निरंजन सोच रहे थे। ऐसा पान खिलाऊँगा बेटा कि सारी आशिकी भूल जाएगी। उन्होंने 'जमालगोटा' की कई गोलियाँ खरीदी और मसल कर पान के पत्तों में मिलाया और बीड़ा बँधवा दिया।

निरंजन दूसरे दिन सबेरे हाल चाल लेने पहुँचे। उन्होंने देखा कि वह रोज से भी ज्यादा प्रफुल्लित कुर्सी पर टाँग फैला कर मजे में नाश्ता कर रहा है। कोई असर नहीं। मीराबाई की तरह सारा जहर अमृत हो गया। छिनार साला। कहीं मीराबाई भी तो छिनार नहीं थीं? जरूर कुछ ऐसा ही रहा होगा। भक्तिन होतीं तो किसी को क्या आपत्ति? वे लोग राजा थे। कोई रोक टोक थी नहीं। दूसरी तीसरी ब्याह लाते। पता चला कि सेठ जी रात से अस्पताल गए हैं। सासू जी को पूरी रात दस्त और उल्टी हुई हैं। सब कुछ उल्टा हो गया। सारी रात यह दोनों अकेले ही घर में रहे। अब तो बर्दाश्त के बाहर हो रहा है। निरंजन ने सोचा, अब तो सब कुछ साफ साफ कहना पड़ेगा सेठानी से।

उस दिन रात को थोड़ा मौका मिला तो निरंजन ने सब कुछ साफ साफ ही कहा, "हो सकता है तुम्हारा भाई हो। लेकिन मुझे इसकी आदतें लफंगों जैसी लगती हैं। तुम्हें चिकोटी काटता है। गोद में उठा कर चक्कर खिलाता है। तुम क्या बच्ची हो। लोग देखेंगे तो क्या सोचेंगे? अपना ख्याल नहीं है तो कम से कम बच्चे के बारे में ही सोचो। कहीं कुछ उल्टा सीधा हो गया तो?"

"बच्चे की चिंता करते हो! मेरी नहीं न।" सेठानी ने आँखों में हँसते हुए उसे देखने और रूठने का अभिनय किया।

"देखो सेठ जी को ले कर मैंने कभी कुछ नहीं कहा, जबकि तुम्हारे साथ उनकी कल्पना करके ही मैं कई कई रात सो नहीं पाता। लेकिन श्यामल! इतना बड़ा हो गया है। रत्ती भर शऊर नहीं। तुम्हारे कमरे में सोता है। मुझे पूरी रात नींद नहीं आती।" निरंजन ने रुआँसा हो कर कहा।

"क्या करूँ? मानता नहीं है।" सेठानी समझाना चाह रही थीं।

निरंजन किसी गहरी दुश्चिंता में होठ काट रहे थे। जो कहना चाह रहे हैं कैसे कहें? उन्होंने पूछा, "तुम्हारे ही बिस्तर पर सोता है?"

"तुम तो सेठ जी से ज्यादा शक्की हो रहे हो। मौसी का लड़का है। भाई लगता है। आखिर तुम कहना क्या चाहते हो।" सेठानी ने अपनी झुँझलाहट छिपाने की कोशिश नहीं की। अब दोनों आमने सामने हो गए।

"कब तक रहेगा यहाँ।" निरंजन ने पूछा सेठानी ने मुँह बिचकाया, "मैं क्या जानूँ? कह रहा था कि यहीं रह कर पढ़ूँगा।" यह साला क्या पढ़ेगा? निरंजन का धैर्य जवाब दे गया। सोच रहे थे कहीं इसके चक्कर में मैं ही न मर जाऊँ, "अगर मैं मर जाऊँ तो तुम्हें कुछ लगेगा कि नहीं?" निरंजन ने दो टूक पूछा।

"तुम क्यों मरोगे? तुम्हारी बीवी है। मैं ही मर जाती हूँ। सारा खेल खत्म हो जाएगा।" सेठानी एक मजदूर औरत की तरह उलाहना देने लगीं।

"देखो, बीवी को बीच में न घसीटो। बिना एक बात बोले हजारों साल से वह जाहिल जानवरों के बीच हमारी नालायकियत भोग रही है।" बीवी का जिक्र आते ही निरंजन अपराध बोध से भर जाते। वे भरसक उनकी यादों और प्रसंगों को बचा जाते हैं।

स्त्री और पुरुष के आत्मीय रिश्तों में आजीवन और अनवरत एक युद्ध चलता रहता है। प्रेम और विवाह इस युद्ध की कूटनीतिक मर्यादाएँ और व्यूह रचना है। सेठानी जोर जोर से रोने लगीं, "तो चले जाओ बीवी के पास। यह तो एक दिन होना ही था।" वह अपने बालों को जोर जोर से नोचने लगीं, "देखूँ, कौन बचाता है मुझे? मैं आज जरूर प्राण दूँगी।" अपने फूले हुए पेट पर वह जोर जोर से घूसा मारने लगीं।

निरंजन ने ऐसे दृश्य की कभी कल्पना तक नहीं की थी। बुरी तरह डर गए। कहीं कोई आ न जाय। लोग देखेंगे तो क्या सोचेंगे। बच्चा भी मर सकता है। उन्होंने हाथ पकड़ने की कोशिश की, लेकिन सेठानी ने झटक दिया, "मुझे अकेला छोड़ दो। कोई नहीं है मेरा! हे भगवान... मैं कितना गिर गई रे बप्पा!!"

क्या हो गया यह सब? निरंजन की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। उन्होंने दोनों हाथों से अपना कान पकड़ा, "देखिए, क्षमा माँग रहा हूँ। हाथ जोड़ रहा हूँ आपके!" सचमुच उन्होंने अपने हाथ जोड़ लिए।

अब सही जगह दाँव पड़ा है - सेठानी ने सोचा, बस थोड़ा और - वह जोर जोर से पैर पटकने लगीं, "जाओ अपनी बीवी के पास। मुझे अब किसी की जरूरत नहीं। मैं जरूर प्राण दूँगी। देखना।"

"कहीं यह वाकई कुछ कर न ले।" निरंजन भीतर तक सहम गए थे। तीन साल पहले इसी अहाते में दीवाली के दिन बारूद की फुलझड़ियों से खेलती एक नवब्याहता चंचल लड़की उनकी आँखों के सामने कौंध गई। हे भगवान, क्या इतनी ही होती है प्यार की उम्र? कितनी जल्दी सब कुछ तहस नहस हो गया। उन्होंने अपने सिर को सेठानी के पैरों पर धर दिया, "एक बार, बस एक बार मुझे आप क्षमा कर दें।"

सेठानी ने घृणा से अपना पैर हटा लिया, "ऐसा ही करता था मेरा बाप मेरी माँ के साथ। अब तुम चले जाओ। मैंने सोच लिया है कि मुझे क्या करना है।" वह जोर जोर से हाँफ रही थीं।

अपने कमरे में लौटते हुए निरंजन भयानक अपमान और आत्मग्लानि में डूबे हुए थे। कितना जलील किया इस औरत ने। कान पकड़ कर माफी माँगना। पैर पर सिर धरना! ओह! प्राइमरी स्कूल में जब मास्टर साहब यही सब करने के लिए कहते थे तब उस उम्र में भी कितनी शर्म आती थी। लेकिन आज इस उम्र में। उन्हें अपना गाँव याद आने लगा। गाँव में लोग कहते हैं कि सेठानी ने मंतर पढ़ कर निरंजन को सुग्गा बना लिया है। अब निरंजन गाँव कभी नहीं आएगा। वह उसे बंदर बना कर नचाती रहती है। "हे भगवान क्या हो गया है मुझे!" वह पुकार उठे, "आत्ममोह की यह दुखांतकी, जो मैंने लिख डाली। करुण विवादों संवादों से भरी हास्य की व्याली।" वह सोच रहे थे, मैं पागल हो जाऊँगा और लोग मुझ पर हँसेंगे।

उन्होंने देखा, सड़क पर इधर उधर पान और सिगरेट की दुकानों पर चारों तरफ लोग गप्प हाँक रहे हैं। चहलकदमी कर रहे हैं। हँस रहे हैं और खुश हैं। आज से तीन साल

पहले उन्होंने पाँच सौ रुपए की उम्मीद की थी, लेकिन सेठ जी ने अपने मन से डेढ़ हजार रुपया देना तय किया। वह दिन उनकी अब तक की जिंदगी का सबसे ज्यादा खुशी का दिन था। उन्होंने सोचा, ज्यादा से ज्यादा कोई आपको खुशियाँ भर दे सकता है। आप उसे सहेज कर न रख सके तो दूसरों का क्या दोष? उनसे चला नहीं जा रहा था। काँप कर सड़क के किनारे अँधेरे में बैठ गए। आज मुझसे ज्यादा दुखी कोई नहीं है दुनिया में- उन्होंने सोचा।

उस रात वह बिना खाए पिए अपने कमरे में करवट पर करवट बदल रहे थे। हफ्ते भर हो गए, आजकल उन्हें नींद नहीं आती। सेठानी आती हैं बस। कहीं सेठानी आत्महत्या न कर लें। ऐसे ही ऊल जुलूस ख्यालों में उनकी रात बीत गई।

सुबह यह सोच कर कि कहीं कुछ अघट न घट गया हो, निरंजन भय और आशंका से भरे सेठ जी के घर पहुँचे। सेठानी मंदिर के सामने चबूतरे पर सामल के साथ बैठकर फरवरी की गुनगुनी धूप सेंक रही थीं। बूढ़ा किचेन में कुछ बना रही थीं। सेठ जी ऊपर के कमरे में थे।

ये दोनों आराम से यहाँ गप्पबाजी कर रहे हैं - निरंजन का बुखार फिर चढ़ने लगा। उन्होंने संबोधित किया, "मुझे आपसे कुछ बात करनी है इधर ही आ जाइए।"

सेठानी दूर छत पर बैठे दो कबूतरों को देख रही थीं। सामल ने पूछा, "निरंजन तुम्हारी आँखें इतनी लाल क्यों हो रही हैं?"

सेठानी ने एक क्षण उपेक्षा से निरंजन को देखा और फिर कबूतरों की ओर देखते हुए सामल से बुदबुदाईं, "बीवी की याद में सूख रहा है।" सामल हँस पड़ा। सेठानी भी।

"मैं आपसे ही कह रहा हूँ।" निरंजन ने दुबारा सेठानी को संबोधित किया।

सेठानी का लहजा तल्ख हो गया, "ऊपर सेठ जी हैं, वहीं जाओ। मुझसे क्या बात करनी है तुम्हें?"

सामल ने समझदारी की, पता नहीं इन लोगों में कैसी दुकानदारी हो, वह उठ कर मौसी के पास चला गया।

"तुम फिर सुबह सुबह उससे चिपक गईं?" निरंजन अब आर पार की लड़ाई लड़ने के मूड में थे।

सेठानी पैर हिला रही थीं, उपेक्षा से मुस्कराईं, "मैं तो सारी रात उससे चिपकी रहती हूँ। तुमसे मतलब?"

साली मुझे मेरी औकात बता रही है। - निरंजन ने सोचा और बोले, "तू रंडी है क्या?"

"तू भी तो रंडा है।" सेठानी गुस्से से उठीं। बर्दाश्त करना मुश्किल है इसे। बोलीं, "अब अगर आज से घर पर कदम भी रखे तो सेठ जी से कह कर तुम्हारा दिमाग सही करा दूँगी। निकल भाग, बेहूदा, जाहिल, गँवार कहीं का।"

निरंजन गुस्से में थरथर काँप रहे थे। कई रात से परेशान, जगी और थकी आँखों में प्रतिशोध से ज्यादा लाचारी दहक रही थी।

"सेठ जी की तो कभी हिम्मत नहीं पड़ी। यह रोब जमाने आया है।" सेठानी ने सामल को बुलाया, "जरा इधर तो आना।"

"क्या बात है बतासा?" सामल की समझ में कुछ नहीं आ रहा था - क्यों इस तरह बतासा को घूर रहा है यह निरंजन? "मूझे घूरोगे?" सेठानी ने तड़प कर कहा, "ले।"

और पूरे जोर से खखार कर उन्होंने निरंजन के मुँह पर थूक दिया।

जड़, पत्थर की मूर्ति। पलकें भी नहीं गिर रही थीं। अटेंशन की मुद्रा में खड़े थे निरंजन। पैंट की जेब में भिंची हुई दोनों मुट्ठियाँ स्पष्टतः दिख रही थीं।

कुछ भौंचक और कुछ डरा हुआ सामल फटी आँखों से यह सब देख रहा था। निरंजन के सिर के बाल, आँख की बरौनियाँ ओर भौंवें साही के काँटे की तरह बन गई थीं। एक क्षण के लिए वे काँपे और लकड़ी के पुतले की तरह गिर पड़े।

सेठ जी दौड़े हुए आए, "पानी का छींटा मारो! बेहोश हो गया है।" उन्होंने हथेलियों को रगड़ कर गर्मी पैदा करने की कोशिश की। अकड़ गई उँगलियों को बड़ी मुश्किल से उन्होंने खोला और देखा कि निरंजन की हथेली में पसीने से भीगा कागज का एक टुकड़ा बुरी तरह मुड़ तुड़ गया था। यही वह अस्त्र था जिसे वे अंतिम बार प्रयोग करना चाहते थे लेकिन...।

घर और गाँव का पता है शायद? सेठ जी ने चश्मा लगाया। निरंजन की लिखावट में लिखा था, "पीछे दाईं ओर मस्सा है ओर बायें जंघे पर दो तिल।" क्या मतलब है इसका? सेठ जी की समझ में कुछ नहीं आया।

तीन शादियों के अलावा परकीया प्रसंगों का सेठ जी को कोई अनुभव नहीं था। मस्सा और तिल...। प्रेमी जनों का सूक्ष्म विवेचन और अचूक फार्मूला उनके पल्ले क्या पड़ता। "देखो तो श्यामल, क्या लिखा है निरंजन ने, क्या मतलब है इसका?"

लेकिन सामल तो पहले ही देख चुका था।

युद्धभूमि में घायल हो चुके बेहोश निरंजन के कूल्हे पर उसने एक लात दिया और भीतर चला गया।

आसपास से बेफिक्र सेठानी आदमकद आइने के सामने अपने को तरह तरह से निहार रही थीं। आत्मग्लानि, पश्चाताप, क्षोभ और कुछ कुछ अपराध बोध के ऊपर मानिनी नायिका का उद्दीप्त तेज चमक रहा था।

"मैं पहले ही दिन इस साले को देख कर समझ गया था।" सामल की आवाज में घृणा थी, "तब तो कहती थी नौकर है। इसकी ईमानदारी को सेठजी बहुत चाहते हैं।"

"अब तुम भी चुप रहोगे कि नहीं?" सेठानी सीधे सामल को मुखातिब हुईं।

मौसी का लड़का था। चुप हो गया।

—— X ——

https://www.hindiadda.com/ek-khandit-premakatha/